Vol. XII
Number-1

ISSN 2319-8265
April 2018 (Special Issue)

EDUCATION TIMES

A Peer Reviewed Journal of Education & Humanities

APH PUBLISHING CORPORATION

बौद्ध धर्म में अहिंसा की प्रासंगिकता

डॉ. रवीन्द्र सिंह राठौड़*

सारांशिका

बौद्ध धर्म में अहिंसा का सिद्धान्त करूणा के रूप में प्रतिपादित किया। ऐसी अहिंसा जो करूणा, आत्म निरोध तथा दुःख दर्द को दूर करने की इच्छा से प्रेरित होती है। इसके अलावा अहिंसा प्रसार के पीछे आधाभूत तथा तर्कसंगत कारण करूणा, दया, सहिष्णुता आदि को बताया गया। बौद्ध धर्म वनस्पति में जीव जन्तुओं के प्रति भी करूणा रखने का आग्रह करता है। भगवान बुद्ध के अनुसार किसी भी जीवित प्राणी का प्राण हरण नही किया जा सकता। बौद्ध धर्म में जो जानबूझकर किसी को मृत्यु की ओर प्रेरित करे उसकी निंदा की गयी है। बुद्ध द्वारा यज्ञबलि व पशुबलि को निरर्थक बताया बल्कि अक्षम्य क्रूरता भी कहा। धम्पपद में कहा है – न हिंसा करनी चाहिए और न ही हिंसा का कारण बनना चाहिए। बौद्ध धर्म के अलावा भी अन्य धर्मों में अहिंसा की बात को सर्वोपरी माना गया है।

मुख्य शब्द

परिधि, सभ्यता, सद्भावना, शांतिमय, संयम, अहिंसा, बन्धुत्व, धम्मपद, करूणा, लक्ष्य, दण्ड।

अहिंसा मानव–जाति के उर्ध्वमुखी विराट चिंतन का सर्वोत्तम विकास–बिन्दु है। व्यक्ति से परिवार, परिवार से समाज, समाज से राष्ट्र से विश्व–बन्धुत्व का जो विकास हुआ या हो रहा है, उसके मूल में अहिंसा की ही पवित्र भावना काम करती रही है। मानव सभ्यता के उच्च आदर्शों का सही–सही मूल्यांकन अहिंसा के रूप में ही किया जा सकता है। अहिंसा की परिधि में समस्त धर्म और समस्त दर्शन समवेत हो जाते हैं। यही कारण है कि प्रायः सभी धर्मों ने इसे एक स्वर में स्वीकार किया है। विश्व के जितने भी धर्म–दर्शन और सम्प्रदाय हैं, उन सभी में अहिंसा के सम्बन्ध में चिंतन किया गया है। सभी ने अहिंसा के महत्व को स्वीकारा है। कुछ धर्मों ने अहिंसा को मुख्य मानकर उनके सिद्धान्तों पर चलने की सलाह दी है, जिनमें बौद्ध धर्म व जैन धर्म प्रमुख है। इसके अलावा भी अन्य धर्मों ने अहिंसा की व्याख्या की है।

वेदों में अहिंसा का स्पष्ट चिंतन नहीं मिलता है किन्तु अहिंसा के फलस्वरूप जिन उदात्त मूल्यों का विकास होता है, उनकी चर्चा वेदों में परिलक्षित होती है। मैत्री, सद्भावना, अपराध को क्षमा करने की प्रार्थना आदि अहिंसात्मक विचार ऋग्वेद, यजुर्वेद आदि में स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है। यजुर्वेद में उल्लेख आता है कि सभी प्राणियों को मित्रवत देखूं। आपस में सभी एक–दूसरे को मित्र के समान देखें।[1] इसी तरह अथर्ववेद में कहा है– "हम सभी एक साथ ऐसी प्रार्थना करें जिससे की आपस में सुमति और सद्भावना का प्रसार हो।"[2] इतना ही नहीं बल्कि विश्व शांति प्रदान करने वाली हो और सभी दिशाएं भी शांतिदायिनी हों।[3]

*सहायक आचार्य, अहिंसा व शांति विभाग, जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय लाडनूं (राजस्थान), ravindrachhapara@gmail.com

जल, औषधियां सभी देवता और ब्रह्म सबके सब शांति देने वाले हों। विश्व पूर्ण शांतिमय हो।[4] इस प्रकार स्पष्ट है कि वेद युग में ऋषियों की वाणी में अहिंसा की स्वर लहरियां मुखरीत हैं। ऋग्वेद में अहिसन्ती[5] अथर्ववेद में अहिसन्तीरमानया का उल्लेख है।[6] अहिंसा अत्यन्त हितकारी है– मैं सभी को मित्र के समान देखूं। परस्पर सभी एक दूसरे को मित्र के समान देखे।[7]

उपनिषद में अहिंसा के सिद्धान्त के रूप में सर्वप्रथम स्वरूप प्रतिपादन छान्दोग्योपनिषद के तृतीय अध्याय में आत्मज्ञान की प्राप्ति का वर्णन करते हुए कहा गया है– तप, दान, आर्जव, अहिंसा और सत्य वचन दक्षिणा है।[8] वहां अहिंसा को परिभाषित करते हुए कहा गया है– सर्वप्राणी की हिंसा न करना अहिंसा है। प्राणाग्निहोत्रोपनिषद् एवं आरणिकोपनिषद आदि में भी अहिंसा को सद्गुण या आत्म संयम के प्रमुख साधन के रूप में प्रस्तुत किया गया है।[9] इस प्रकार हम देखते हैं कि उपनिषदों में अहिंसा को आत्मज्ञान का एक साधन माना गया है तथा मनुष्य को सदाचार के एक प्रधान अंग के रूप में स्वीकृत किया गया है।

महाकाव्यों में अहिंसा को प्रस्तुत किया है। रामायण में अहिंसा, सत्य, आत्मसंयम, दया, सहिष्णुता, क्षमा, आतिथ्य, मन–वचन–कर्म की शुद्धि पर अत्यधिक बल दिया है।[10] सामाजिक दृष्टि से अहिंसा पर चिंतन करते हुए कहा गया है– राजा, स्त्री, बालक, वृद्ध और शरणागत की रक्षा करनी चाहिए। उनका वध करना बहुत बड़ा पाप है।[11] इस ग्रंथ में अहिंसा की चर्चा सीधे रूप में न करके पात्रों के गुणों का उत्कीर्तन करते हुए की गई है। महाभारत में अहिंसापरमोधर्मः के अटल सिद्धान्त को सम्मुख रखकर अहिंसा की विवेचना की गई है। अहिंसा ही उत्तम एवं पावन धर्म है अतः मनुष्य को कभी भी कहीं भी और किसी भी प्राणी की हिंसा नहीं करनी चाहिए। अनुशासन पर्व में अहिंसा को नैतिक या धार्मिक दृष्टि से बहुत ऊंचा स्थान दिया गया है। यहां अहिंसा परम धर्म है, परम तप है, परम सत्य है और अन्य धर्मों की उद्गम स्थली है। यह परम संयम है, परम दान है, परम ज्ञान, परम–फल, परम–मित्र तथा परम–सुख।[12] अतः जो अहिंसा के पथ पर चलता है, उसकी तपस्या अक्षय होती है। मार्ग का निरूपण करते हुए श्रीकृष्ण ने कहा– अहिंसा वह कर्म है जिसके करने से व्यक्ति को किसी प्रकार काभय उद्वेग नहीं होता है, जबकि हिंसा वह कर्म है, जिसके करने से व्यक्ति में प्रतिपल भय तथा उद्वेग होता है। श्रीकृष्ण का यह मन्तव्य था कि अहिंसा, समता, संतोष, दान आदि जितने भी सुकर्म है वे सभी मेरे से ही उत्पन्न हुए हैं।[13] प्राणियों को कष्ट न देना हिंसा न करना अहिंसा है।

पुराण साहित्य में भी अहिंसा का विवेचन यत्र–तत्र हुआ है। वायु पुराण का मन्तव्य है, मन, वाणी और कर्म से सभी जीवों के प्रति अहिंसा का पालन करना चाहिए।[14] अग्निपुराण में कहा गया है– अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह– ये पांचों यम–मुक्ति प्रदान करने वाले हैं।[15] इसके साथ ही मनुस्मृति सदाचार पालन संदेश देती है। उसके अनुसार अन्तरात्मा को सुख पहुंचाने वाला कर्म अहिंसा है। मनुस्मृति का संदेश है कि प्राणियों की पीड़ा न पहुंचाते हुए हिंसा से रहित और दान तथा दम इस प्रकार के व्रत वाला मनुष्य स्वर्ग को जीत लेता है। मनुस्मृति में कतिपय पशु–पक्षियों के मांस–भक्षण का निषेध है। इसकी यह मान्यता है कि मांस न खाना अश्वमेघ यज्ञ के बराबर है।[16] मनु ने संस्कृत में कहा– जो कार्य तुम्हें पसंद नहीं वह कार्य दूसरों के लिए भी मत करो। सभी जीवों में आत्मा को व आत्मा से सम्पूर्ण जीव जगत् को देखो।

यहूदी धर्म का मन्तव्य है– किसी व्यक्ति के आत्म–सम्मान को चोट न पहुंचाओ। किसी के सामने किसी व्यक्ति को अपमानित न करो। उसका अपमान करना उतना ही महापात है, जितना कि किसी व्यक्ति का खून

करना। प्राणी मात्र के प्रति निर्वैरभाव रखने की प्रेरणा प्रदान करते हुए यह बतलाया गया है कि अपने मन में किसी के प्रति वैर का दुर्भाव मत रखो। बन्धुत्व भाव को विकसित करने के लिए कहा है– बन्धुत्व का प्रेम जाति और धर्म की सीमाओं के ऊपर है। इसी तरह ईसाई धर्म में महात्मा ईसा ने कहा है कि " तू तलवार म्यान में रख ले क्योंकि जो लोग तलवार चलाते हैं वे सब तलवार से ही नष्ट किये जायेंगे।" अन्यत्र कहा गया है– "तुम अपने दुश्मन को भी प्यार करो और जो तुम्हें सताते हैं, उनके लिए भी प्रार्थना करो। अपने शत्रु से प्रेम करो, जो तुम से वैर करे, उनका भी भला सोचो और करो। जो तुम्हें श्राप दें उन्हें आशीर्वाद दो। जो तुम्हारा अपमान करे, उसके लिए प्रार्थना करो। जो तुम्हारे एक गाल पर थप्पड़ मारे, उसकी तरफ दूसरा गाल भी कर दो। जो तुम्हारी चादर छीन ले, उसे अपना कुर्त्ता भी लेने दो। ईसा का यह संदेश अहिंसा का जीवन्त रूप है। इस तरह ईसाई धर्म में अहिंसा की भावनाएं मानव सेवा और प्रेम के रूप में विकसित हुई है। इसी तरह इस्लामधर्म कामन्तव्य है कि खुदा सारे जगत का पिता है और जगत में जितने भी प्राणी हैं, वे सभी खुदा के ही बन्दे और पुत्र हैं। खुदा के मन में कण–कण में दया का निवास है। मुहम्मद साहब के उत्तराधिकारी हजरत अली ने मानवों को सम्बोधित कर उपदेश देते हुए कहा है– मानव तू पशु पक्षियों की कब्र पेट में मत बना अर्थात् तू मांस का भक्षण न कर।

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट है कि इस्लाम धर्म में भी अहिंसा को प्रधानता दी गई तथा मदिरापान, ईर्ष्या, लालच, असत्य, कृपणता, अभिमान, हिंसा आदि को त्याज्य बताया है।

जैन धर्म में अहिंसा का बहुत ही सूक्ष्म विवेचन किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि जैनधर्म के प्रत्येक क्रियाकलाप में अहिंसा की दिव्य ध्वनि मुखरित हो रही है। जैनधर्म का मूल आधार ही अहिंसा है। भगवान महावीर ने अहिंसा को सभी जीवों के लिए कल्याणकारी एवं मंगलकारी माना। अहिंसा का अर्थ है– हिंसा का न होना, हिंसा की भावनाओं और हिंसाजन्य क्रियाओं का अभाव होना। यह है भगवान महावीर की आत्मौपम्य दृष्टि, जो अहिंसा से ओत–प्रोत होकर विराट विश्व के सम्मुख एकात्मकता का महान दर्शन प्रस्तुत कर रही है।

बौद्ध धर्म भारत का एक प्रमुख धर्म रहा है तथा इसकें अहिंसा की प्रधानता रही है। इस धर्म के प्रसिद्ध एवं मान्य ग्रंथों में अहिंसा की प्रेरण दी गई है कि मन, वचन और कर्म से अन्य प्राणियों को कष्ट न दिया जाय।[17] अहिंसा का पथिक न स्वयं किसी को कष्ट देता है और न किसी को कष्ट के लिए प्रेरित करता है।[18] धम्मपद में बुद्ध ने हिंसा को अनार्य कर्म कहा है। वे कहते हैं जो प्राणियों की हिंसा करता है, वह आर्य नहीं होता। सभी प्राणियों के प्रति अहिंसा का पालन करने वाला ही आर्य कहा जाता है।[19] पांचवी सदी ई. पू. में बुद्ध ने बल देकर इसकी वकालत कर अपनी मुख्य शिक्षाओं में शामिल किया, सैद्धान्तिक आधार प्रदान किया तथा इस अतुलनीय अच्छाई बताया। जो लोग भगवान बुद्ध के उपदेशों को मानते हैं उन्हें अहिंसा को एक और साक्षी माना है जो परिस्थितिजन्य साक्षी की अपेक्षा सीधी साक्षी माना है और वह एक प्रकार से अहिंसा की परिभाषा ही है। उन्होंने कहा है– "सबसे मैत्री करो, ताकि तुम्हें किसी प्राणी को मारने की आवश्यकता न पड़े।"[20] यह अहिंसा के सिद्धान्त के कहने का स्वीकारात्मक ढंग है। महात्मा बुद्ध पशु हिंसा के घोर विरोधी थे। अहिंसा उनके सिद्धान्तों में प्रमुख थी। वे न केवल यज्ञों में पशुबलि के विरोधी थे।[21] ऐतिहासिक भारत में अहिंसा के सिद्धान्त का प्रयोग प्रथम बार उपनिषदों के लेखकों द्वारा यज्ञों की क्रूरता के सम्बन्ध में किया गया।[22] यही से शाकाहार का सिद्धान्त प्रतिपादित हुआ।

बौद्ध अहिंसा अन्तर्दृष्टि को विविध क्षेत्रों जैसे कि पर्यावरणीय आचार संहिता, दैनिक जीवन, अन्य प्राणियों से सम्बन्ध तथा उनके प्रति नैतिक विचार एवं समाज में किनारे कर दिए गये वर्गों की दशा को समझने की आवश्यकता में निश्चित रूप से लागू किया जा सकता है। बुद्ध ने अपना अहिंसा का दर्शन इस सामान्य तथ्य पर आधारित माना है यद्यपि अहिंसा का पूर्णतया पालन कठिन हो सकता है परन्तु हृदय में अहिंसा की मनोवृत्ति को पूर्ण तौर से उत्पन्न करना असंभव नहीं है। संतुलित तथा विवेकपूर्ण अहिंसा का सिद्धान्त मानव सभ्यता के लिए संभवतः बौद्ध धर्म की अत्यन्त महत्वपूर्ण देन। बौद्धधर्म में अहिंसा का तात्पर्य है– जानबूझकर जीवित प्राणियों के घात से बचना। दूसरे शब्दों में एक बौद्ध धर्मानुयायी से आशा की जाती है कि उसे न केवल हिंसा नहीं करनी चाहिए बल्कि दूसरों को भी हिंसा के लिए नहीं उकसाना चाहिए। जानबूझकर हिंसा करने का तात्पर्य है, अन्तर्निहित अखण्डता को बाधित और नष्ट करना तथा सम्मान और करुणा, जो कि मानवता के आधार हैं, की भावनाओं को कुण्ठित करना। हिंसा मन, वचनों व कार्यों द्वारा भी की जा सकती है, प्राचीन भारतीय बौद्ध धर्म ने मुख्य रूप से कार्यों द्वारा की गई हिंसा की ओर अधिक ध्यान दिया था।

बुद्ध द्वारा यज्ञ बलि व पशुबलि को न केवल हास्यास्पद एवं निरर्थक बताया गया है बल्कि अक्षम्य क्रूरता भी कहा। उनके अनुसार– सभी जीवित प्राणियों में से किसी को भी हानि नहीं पहुंचानी चाहिए।''[23] ''वह यज्ञ– (जिसमें)– जीवित प्राणियों का वध होता हो– न तो ज्यादा फलदायक होती है (और) न ही अत्यधिक लाभदायक, न ही प्रसिद्धि वाली होती है। सामज्जफल सुत में हमें बताया गया है कि ''भिक्षु जीवित प्राणियों की हिंसा को छोड़कर जीवन को नष्ट करने से स्वयं को अलग रखता है। वह लाठी और तलवार अलग रख चुका है तथा कठोरता से शर्मिन्दा एवं दया ओत–प्रोत, वह उन सभी जन्तुओं के प्रति जिनमें जीवन है, सहृदयता एवं दया से रहता है।[24] बौद्ध धर्म में अहिंसा का करुणा तथा लज्जा से एकीकरण कर दिया गया है। जहां कही किसी दिल में करुणा है, वह बाहरी तौर पर अहिंसा के कार्य के रूप में अभिव्यक्त होती है। अहिंसा शब्द एक भव्य कार्य माना जाता है क्योंकि यह न केवल जिसके लिए किया जाता है, बल्कि उसके लिए जो इसका पालन करता है, सुखद परिणाम देता है।

बौद्ध धर्म में अहिंसा को इस अर्थ में बताया गया है कि सभी व्यक्ति अपने जीवन से प्यार करते हैं और किसी अन्य से हानि पहुंचने या मारे जाने की इच्छा नहीं रखते हैं। उदाहरण के लिए धम्मपद इसी विचार को दुहराते हुए कहता है कि जैसे सभी मृत्यु से डरते हैं वैसे ही दूसरों की तुलना स्वयं से करते हुए किसी की न तो हिंसा करनी चाहिए और न ही हिंसा का कारण बनना चाहिए।[25] बौद्ध धर्म में अहिंसा का अभ्यास कई प्रकार से बताया गया है। उदाहरण के लिए आर्य आष्टांगिक मार्ग में सम्यक कर्म की व्याख्या अहिंसा के रूप में की जा सकती है।[26] इसी प्रकार जब बुद्ध ने सिंगालिक को एक उपासक के हर रोज के सही व्यवहार का उपदेश दिया तो पहला सिद्धान्त जो व्याख्यायित किया गया वह था, जीवित प्राणियों की हिंसा न करना। उपासक व उपासिकाओं से जिस पंचशील के पालन को कहा गया है उनमें पहला है जीव हिंसा से बचना। अहिंसा के सिद्धान्त को आठ शिक्षापदों में शामिल किया गया है, जिसका बौद्धों द्वारा महीने के चार दिनों के उपवास के अवसर पर पालन किया जाता है। बौद्ध धर्म उस व्यक्ति की घोर निंदा करता है ''जो जानबूझकर तथा लक्ष्य साधकर विभिन्न तरीकों से मृत्यु की अच्छाई का वर्णन करें या किसी को मृत्यु की ओर प्रेरित करे।''[27]

बौद्ध धर्म में पेड़ पौधों को हानि पहुंचाने पर भी रोक है तथा इस प्रकार बुद्ध के अनुसार एक आदर्श व्यक्ति प्राणजात तथा वनस्पति जीवन को हानि पहुंचाने से बचता है। उन्होंने सबसे 'जीव जन्तुओं के प्रति करुणा रखने' का आग्रह किया। बुद्ध ने समझाया कि "किसी भी जीवित प्राणी के जीवन का अंत न किया जाए, चाहे वह कितना भी सूक्ष्म क्यों न हो।[28] भिक्षुओं को मिट्टी खोदने की अनुमति नहीं थी। पानी को पीने के पहले अवश्य ही छान लिया जाना चाहिए, क्योंकि इसमें जीवित प्राणी होते है। फल वही खाना चाहिए जिसमें बीज न हुए हो या बीज न बचे हो। लेकिन आरम्भिक बौद्ध धर्म में विशेष परिस्थितियों में "अप्रत्यक्ष हिंसा" की अनुमति भी थी। उदाहरण के लिए आरम्भिक बौद्ध धर्म में चमड़े का प्रयोग, पशुओं के चर्म का सीमान्त देशों में पलंगपोश के रूप में प्रयोग की अनुमति थी। जातक में यह उल्लेख किया गया है कि "कुछ विशेष परिस्थितियों में बोधिसत्व भी जीव हत्या कर सकते हैं।" विशेषकर वहां जहां उनकी जन्मकुण्डली में दोष हो।[29] बौद्ध धर्म कुछ हद तक ही अहिंसा के बारे में भारतीय मनोवृत्ति बदल सका तथा कोई गंभीर प्रभाव न छोड़ सका क्योंकि जानवरों की हिंसा कम से कम अशोक के समय तक जोर–शोर से होती रही।

"यदि लोग मात्र यह जानते हैं कि दण्ड से दुःखदाई जन्म होगा, जीवित प्राणी हिंसा करना छोड़ देंगे। दुःख वस्तुतः हत्या करने वालों के लिए ही होता है।"'[30]

बौद्ध धर्म में अहिंसा के सिद्धान्त के दो पहलू हैं– 1. नकारात्मक– ऐसी अहिंसा जो करुणा, आत्म–निरोध तथा दुःखदर्द को दूर करने की इच्छा से प्रेरित होती है। 2. सकारात्मक– ऐसी अहिंसा जो पहले के समान उद्देश्य, इच्छा तथा अभिप्राय से प्रेरित होती है। दूसरे शब्दों में, सकारात्मक निष्पक्ष विचारों को ध्यान में रखकर की गई हिंसा को अहिंसा की ही अभिव्यक्ति माना जाता है।

ऐसा प्रतीत होता है कि बुद्ध द्वारा अहिंसा के प्रसार के पीछे आधारभूत तथा तर्कसंगत कारण करुणा, दया, उपेक्खा, मेत्ता, सहिष्णुता तथ सद्राव थे जिन्हें सामान्यतया प्राचीन भारतीय बौद्ध धर्म द्वारा प्रशंसित किया गया तथा श्रेष्ठ फल तथा लाभ के रूप में लिया गया। पालि त्रिपिटक के अनुसार चला जाए तो हम पाते हैं कि बुद्ध ने मांस–भक्षण पर प्रतिबंध नहीं लगाया था। एक भिक्षु को "जो कुछ भी उसके भिक्षा–पात्र में डाला जाए" उसे स्वीकारने की अनुमति थी। उनका मानना था कि शुद्धता खाद्य–पदार्थों पर निर्भर नहीं करती। बल्कि यह शारीरिक, मानसिक तथा सदाचार के उस आचरण के नियंत्रण से संभव होती है जो मनुष्य को दूषित करता है।[31] पुतमंस सुत में बुद्ध ने अपने शिष्यों को उपदिष्ट किया है कि ठोस भोजन आनन्द आसक्ति अपने को संवारने या अपनी सुन्दरता के लिए नहीं बल्कि मात्र जीवन की आवश्यकता के रूप में लिया जाना चाहिए।

वह धर्म जो अपने दर्शन का आधार करुणा, मुदिता तथा उपेक्खा को बनाकर सभी जीवों के कल्याण की कामना करता हो, दया रखता हो, वह मांस–भक्षण की अनुमति दी हो ऐसा नहीं हो सकता। बौद्ध धर्म मनुष्य तथा जानवर एवं वनस्पति व बीज आदि के बीच भिन्नता में विश्वास करता है। दोनों को नष्ट करना या उन्हें क्षति पहुंचाना पाप माना गया है। इस तरह बौद्ध धर्म में हिंसा को एक निम्न स्तर तक भी माना गया है। लेकिन अहिंसा की महत्ता को बताते हुए वह आगे बढ़ा और जब वह विश्वव्यापी बन गया तब इसके अनुयायियों ने हिंसा का मार्ग अपनाया और धर्म को पतन की ओर ले गये जिसका परिणाम वर्तमान समय में हमारे सामने है।

संदर्भ

1. यजुर्वेद 3.6.18
2. अथर्ववेद 3.30.4
3. ऋग्वेद 7.35.7
4. यजुर्वेद 36.17
5. ऋग्वेद 10.12.13
6. अथर्ववेद 9.8.13
7. यजुर्वेद 36/18
8. छान्दोग्योपनिषद 3.17.4
9. प्राणाग्नि होत्रोपनिषद, खण्ड–4
10. वाल्मीकि रामायण, 2.109.31
11. वाल्मीकि रामायण, 2.96.24
12. अनुशासन पर्व (महाभारत) अध्याय 115, 116, श्लोक 23, 28–30
13. गीता, 10/5
14. अग्निपुराण, अ. 372
15. मनुस्मृति, अध्याय 5
16. मनुस्मृति, अध्याय–5
17. संयुक्तनिकाय (हिन्दी अनुवाद), पहला भाग, पृ. 71
18. धम्मपद 25.9.10
19. वही, 270
20. भगवान बुद्ध और उनका धर्म, पृ. 275
21. प्राचीन भारत का धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक जीवन, पृ. 61
22. छान्दोग्य उपनिषद ष्ष 17.4
23. The Book of Gradual Saying, Tr. F.L. Woodword, Vol.-II, p. 183
24. Dialogues of theBuddha, Vol.-II, p. 307
25. धम्मपद 4/29
26. The Mejjhima Nikaya, Vol.-III, 251
27. The Vinaya Pitaka, Vol.-III, 73
28. The Sacred Book of the East, Vol. 17, p. 30
29. The Jataka, Vol.-II, p. 265
30. Journal of Indian History, p. 168
31. The Anguttatanikaya, Vol.-I, 221